11

यमसूक्त

प्रस्तावना

शरीर में जैसे सर वैसे ही संस्कृत साहित्य में वेदों की प्रधानता है। भारत में धर्मव्यवस्था वेदों से ही ली गई है। वेदो का धर्मनिरूपण में स्वतन्त्रभाव से प्रमाण है, स्मृति आदि तो वेदमूलक ही है। इसलिए श्रुति और स्मृति के विरोध में श्रुति ही श्रेष्ठ है। वेद केवल धर्ममूलक ही नही है अपितु वेदो में अनेक समस्याओं का समाधान है, और सबसे प्राचीन ग्रन्थ भी है। प्राचीन धर्मसमाज-व्यवहार-आदि वस्तुजात का बोध कराने में केवल वेद ही सक्षम है। ''विद्यन्ते धर्मादयः पुरुषार्थाः यैः ते वेदाः'' इति। सायण ने 'अपौरुषेयं वाक्यं वेद' कहा है। ''इष्टप्राप्त्यनिष्टपरिहारयोरलौकिकम् उपायं यो वेदयति स वेद'' इति। और कारिका-

''प्रत्यक्षेणानुमित्या वा यस्तूपायो न विद्यते।
एनं विदन्ति वेदेन तस्माद् वेदस्य वेदता॥'' इति।

वेदा चार होते है। और वे हैं - ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद। वहाँ ऋग्वेद के देवता में यम एक प्रसिद्ध देव हैं। ऋग्वेद में तीन सूक्तों में उसकी कथा प्राप्त होती है। ऋग्वेद में साधारण रूप से मृत्यु के देवतारूप में प्रसिद्ध है। मृत्यु के बाद सभी प्राणी यम के पास ही जाते है।

वह हमारे पूर्वज हैं, मृत्यु के बाद जो प्रथम प्रेतलोक के मार्ग को जानता था - ''यमो नो गातुं प्रथमो विवेद''। इस प्रकार का वह यम है। उसके विषय को आधारीत करके इस सूक्त की रचना की है। इस दशवें मण्डल के चौदहवें सूक्त का (ऋ.वे.10.14) यम वैवस्वत ऋषि, यम, आङ्गिर, पित्रखथवभृगुसोर्मा, लिङ्गोक्तदेवता अथवा पितर है, श्वानौ, त्रष्टुप्, अनुष्टुप् और बृहती छन्द है।

टिप्पणी

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे –

- यमसूक्त को जान पाने में;
- यम को जान पाने में;
- वैदिक शब्दों को जान पाने में;
- लौकिक शब्दों को जान पाने में;
- लौकिक वैदिक शब्दों के भेद को जान पाने में;
- अपने आप मन्त्र की व्याख्या कर पाने में;
- अपने आप अन्वय आदि कर पाने में;
- मन्त्र में स्थित व्याकरण आदि को जानने में।

11.1 मूलपाठ

परेयिवांसं प्रवतो महीरनु बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानम्।
वैवस्वतं संगमनं जनानां यमं राजानं हविषा दुवस्य॥1॥
यमो नो गातुं प्रथमो विवेद नैषा गव्यूतिरपभर्तवा उ।
यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुरेना जज्ञानाः पथ्या३ऽऽ अनु स्वाः॥2॥
मातली कव्यैर्यमो अङ्गिरोभिर्बृहस्पतिर्ऋक्वभिर्वावृधानः।
याँश्च देवा वावृधुर्ये च देवान्त्स्वाहान्ये स्वधयान्ये मदन्ति॥3॥
इमं यम प्रस्तरमा हि सीदाङ्गिरोभिः पितृभिः संविदानः।
आ त्वा मंत्राः कविशस्ता वहन्त्वेना राजन्हविषा मादयस्व॥4॥
अङ्गिरोभिरा गहि यज्ञियेभिर्यम वैरूपैरिह मादयस्व।
विवस्वन्तं हुवे यः पिता तेऽस्मिन्यज्ञे बर्हिष्या निषद्य॥5॥
अङ्गिरसो नः पितरो नवग्वा अथर्वाणो भृगवः सोम्यासः।
तेषां वयं सुमतौ यज्ञियानामपि भद्रे सौमनसे स्याम॥6॥
प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्व्येभिर्यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुः।
उभा राजाना स्वधया मदन्ता यमं पश्यासि वरुणं च देवम्॥7॥

सं गच्छस्व पितृभिः सं यमेनेष्टापूर्तेन परमे व्योमन्।
हित्वायावद्यं पुनरस्तमेहि सं गच्छस्व तन्वा सुवर्चाः॥8॥
अपेत वीत वि च सर्पतातोऽस्मा एतं पितरो लोकमक्रन्।
अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो ददात्यवसानमस्मै॥9॥
अति द्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ शबलौ साधुना पथा।
अथा पितॄन्त्सुविदत्राँ उपेहि यमेन ये सधमादं मदन्ति॥10॥
यौ ते श्वानौ यम रक्षितारौ चतुरक्षौ पथिरक्षी नृचक्षसौ।
ताभ्यामेनं परि देहि राजन्त्स्वस्ति चास्मा अनमीवं च धेहि॥11॥
उरूणसावसुतृपा उदुम्बलौ यमस्य दूतौ चरतो जनाँ अनु।
तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दातामसुमद्येह भद्रम्॥12॥
यमाय सोमं सुनुत यमाय जुहुता हविः।
यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्निदूतो अरंकृतः॥13॥
यमाय धृतवद्धविर्जुहोत प्र च तिष्ठत।
स नो देवेष्वा यमद्दीर्घमायुः प्र जीवसे॥14॥
यमाय मधुमत्तमं राज्ञे हव्यं जुहोतन।
इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकृद्भ्यः॥15॥
त्रिकद्रुकेभिः पतति षळुर्वीरेकमिद्बृहत्।
त्रिष्टुब्गायत्री छन्दांसि सर्वा ता यम आहिता॥16॥

11.1.1 व्याख्या

परेयिवांसं प्रवतो महीरनु बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानम्।
वैवस्वतं संगमनं जनानां यमं राजानं हविषा दुवस्य॥1॥

पदपाठ- परेयिऽवांसम्। प्रऽवतः। महीः। अनु। बहुऽभ्यः। पन्थाम्।
अनुऽपस्पशानम्। वैवस्वतम्। समऽगमनम्। जनानाम्। यमम्।
राजानम्। हविषा। दुवस्य॥1॥

अन्वय- पयेयिवांसम् महीः बहुभ्यः अनुप्रवतः राजानम् यमम् हविषा दुवस्य अनुपस्पशानाम् पन्थानम् वैवस्वतम् जनानाम् सङ्गमनम्।

व्याख्या- पृथिवी लोक पर स्थित पुराने, उन्नत और थोड़े समय के या ताजे उत्पन्न एवं सभी पदार्थों को सभी ओर से अधिकार करके प्राप्त तथा बहुत प्रकार से जीवन मार्ग को पाशतुल्य स्वाधीन करते हुए और जायमान अर्थात उत्पन्नमात्र वस्तुओं के प्राप्ति स्थानरूप सूर्य के पुत्र

काल –समय प्रातः सांय –अमावस्या –पूर्णिमा –ऋतु संवत्सर विभाग युक्त राजा के समान वर्तमान विश्वकाल समय को आहुति क्रिया से हे जीव! तु दीर्घायुलाभ के लिए स्वानुकूल बना यह आन्तरिक विचार है। यमाय मधुमत्तमम् यहाँ पर बृहती है। आदितो द्वादश त्रिष्टुभ है। और भी 'चानुक्रान्तम्- यरेयिवांसं षोळश यमो यामं पष्ठी लिङ्गोक्तदेवता पराश्च तिस्रः पित्र्या वा तृचःश्वभ्यां परा अनुष्टुभो बृहत्युपान्त्या यह सूक्त में आया हुआ विनियोग है। महापुतृयज्ञे यमयाग आद्या याज्या। सूत्रितञ्च इमं यम प्रस्तरमा हि सीदेति द्वे परेयिवांसं प्रवतो महीरनु(आ. श्रौ. 2।19।22) इति। हे यजमान तुम राजा को पितरो के स्वामी यम को हवि पुरोडश आदि देकर प्रसन्न करते है।

सरलार्थ- (हे यजमान तुम) परलोकवासी के उत्पति स्थिति और नाश का निमित हो, उस आयुवर्धक सूर्य पुत्र को पदार्थो के होम द्वारा स्वानुकुल बनाना चाहिए। स विवस्वत का पुत्र मृत मनुष्यों को मिलाता है।

व्याकरण-

- परेयिवांसम्- परापूर्वक-इण्-धातु से क्वसु प्रत्यय करने पर द्वितीयाएकवचन में यह रूप है।
- प्रवतः- प्र उपसर्ग से 'उपसर्गाच्छन्दसि धात्वर्थे' इससे स्वार्थे में वतिप्रत्यय करने पर यह रूप बनता है।
- महीः- महशब्द से ङीप् प्रत्यय करने पर द्वितीया बहुवचन में यह रूप है।
- पन्थाम्- पथिन्-शब्द का द्वितीया एकवचन में यह वैदिकरूप है।
- अनुस्पशानम्- अनुपूर्वकस्पश्-धातु से कानच् प्रत्यय करने पर द्वितीया एकवचन में यह रूप बनता है।
- वैवस्वतम्- विवस्वतः अपत्यं पुमान् इस विग्रह में अण्प्रत्यय करने पर द्वितीया एकवचन में यह रूप बनता है।
- सङ्गमनम्- सम्पूर्वक-गम्-धातु से ल्युट-प्रत्यय करने पर द्वितीया एकवचन का यह रूप है।

यमो नों गातुं प्रथमो विवेद नैषा गव्यूतिरपभर्तवा उ।
यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुरेना जज्ञानाः पथ्या३०० अनु
स्वाः॥2॥

पदपाठ- **यमः। नः। गातुम्। प्रथमः। विवेद। न। एषा। गव्यूतिः।**
अपऽभर्तवै। ओम् (ॐ) इति। यत्र। नः। पूर्वे। पितरः।
पराऽईयुः। एना। जज्ञानाः। पथ्याः। अनु। स्वाः॥2॥

अन्वय- यमः प्रथमः नः गातुम् विवेद। एषा गव्यूतिः उ न अपभर्तवै यत्र नः पूर्वे पितरः परेयुः, एना जज्ञानाः स्वाः पथ्याः अनु।

व्याख्या- समय ने ही हमारी जीवन गति को प्रथम से ही प्राप्त किया हुआ है अत यह काल मार्ग किसी तरह त्यागा नही जा सकता जिस मार्ग में हमसे पूर्व उत्पन्न जनक आदि पालक जन भी कुल परंपरा से यात्रा करते चले आये हुए है, और इसी मार्ग से उत्पन्न हुए सभी प्राणी और वनस्पति आदि पदार्थ निज मार्ग सम्बन्धी धर्मो का अनुगमन करते है, अत उस समय को पूर्व मन्त्रानुसार होम द्वारा स्वानुकुल बनाना चाहिए।

सरलार्थ- यम ही प्रथम है, जो हमारे शुभ अशुभमार्ग को जानता है। अच्छे ज्ञान के विष में और बुरे ज्ञान के विषय में ज्ञान को कोई हर नही सकता है। हमारे पूर्वज जिस मार्ग से गये है, ज्ञानी लोग भी उसी पन्थ का अनुसरण करता है।

व्याकरण-

- गातुम्- गौ-धातु से तुमु प्रत्यय करने पर यह रूप बनता है।
- विवेद- विद्-धातु से परस्मैपद में लिट् लकार प्रथम पुरुष एकवचन में यह रूप बनता है।
- जज्ञानाः- जन्-धातु से कानच् प्रत्यय करने पर प्रथमा बहुवचन में यह रूप बनता है।

मातली कव्यैर्यमो
अङ्गिरोभिर्बृहस्पतिर्क्वभिर्वावृधानः।
याँश्च देवा वावृधुर्ये च देवान्त्स्वाहान्ये स्वधयान्ये
मंदन्ति॥3॥

पदपाठ- **मातली। कव्यैः। यमः। अङ्गिरःऽभिः। बृहस्पतिः। ऋक्वऽभिः। ववृधानः। यान्। च। देवाः। ववृधुः। ये। च। देवान्। स्वाहा। अन्ये। स्वधया। अन्ये। मदन्ति॥3॥**

अन्वय- मातली कव्यैः यमः आङ्गिरोभिः ऋक्कभिः बृहस्पतिः ववृधानः। देवाः यान् ववृधुः, ये च देवान् अन्ये स्वाहा अन्ये स्वधया मदन्ति।

व्याख्या-अग्निमारुते मातली कव्यै रित्येषा धाय्या। सूत्रितञ्च -इमं यम प्रस्तरमा हि सीद मतली कव्यैर्यमो अङ्गिरोभिरुदीरतामवर उत्परासः (आ0श्रौ0 5.20.6) इति।

मातलि इन्द्र का सारथी है, उस प्रकार का इन्द्र वाला मातली है। वह काव्यो के द्वारा काव्य के भागो का पितर के साथ बढ़ती रहे है। यम अङ्गिरा के साथ और पितरो के साथ विशेष रूप से आगे बढता है। (बृहस्पतिः ऋक्वभिः ऋक्प्रतिपाद्यैः पितृविशेषैः सह वर्धमानो भवति।) वहा देव इन्द्र आदि यान् को और काव्य भाग आदि को विशेष रूप से बढ़ाते रहते है और ये काव्य के भाग पितरो और इंद्र आदि देवो को बढ़ाता है। उनके मध्य में अग्नि इन्द्र आदि के लिए स्वाहा शब्दों का प्रयोग करके उन्हें प्रसन्न करने का प्रयास किया गया है। अन्य पितरों को स्वधा और स्वधाकार से उन्हें संतुष्ट करने का प्रयास किया गया है।

टिप्पणी

सरलार्थ- मातलि काव्यों के साथ, यम अङ्गिरा आदि के साथ, बृहस्पति का ऋग्वेद के साथ वृद्धि को प्राप्त होता है। जिनका देवता संरक्षण करते है, और देवता में कुछ स्वाहा द्वारा और अन्य स्वधा द्वारा (हव्यदान से) आनन्दित होते है।

व्याकरण-

- कव्यैः-यहाँ साथ अर्थ में तृतीया है।
- वावृधुः-वृध्-धातु से लिट् प्रथम पुरुष बहुवचन का यह रूप है।
- स्वाहा-स्वाहा शब्द के तृतीया एकवचन में यह वैदिक रूप है।
- स्वधया- स्वधा शब्द के तृतीया एकवचन में यह रूप है।
- मदन्ति- मद्-धातु से लट् प्रथम पुरुष बहुवचन का यह रूप है।

इमं यम प्रस्तरमा हि सीदाङ्गिरोभिः पितृभिः संविदानः।
आ त्वा मन्त्राः कविशस्ता वहन्त्वेना राजन्हविषा मादयस्व॥4॥

पदपाठ- **इमम्। यम। प्रऽस्तरम्। आ। हि। सीद। अङ्गिरःऽभिः। पितृऽभिः। सम्ऽविदानः। आ। त्वा। मन्त्राः। कविऽशस्ताः। वहन्तु। एना। राजन्। हविषा। मादयस्व॥4॥**

अन्वय- यम आङ्गिरोभिः पितृभिः संविदानः इमं प्रस्तरम् आसीद। हि कविशस्ताः मन्त्राः त्वा आवहन्तु राजन् एना हविषा मादयस्व।

व्याख्या- महापितृयज्ञ इमं यमेत्यादिके द्वे अनुवाक्ये। इमं यम प्रस्तरमा हि सीदेति द्वे (आ0श्रौ0 2.19.22) इति हि सूत्रितम्। सैवाग्निमारुतेपि धाय्या। सूत्रं पूर्वमेवोदाहृतम्।

हे यम, अङ्गिरा तु प्राणों के अनुकूल होता हुआ मेरे इस शरीर रूपी यज्ञ को जीवन वृद्धि के हेतु अवश्य भलीं प्रकार प्राप्त हो शरीर विद्यावेता विद्वानों के निर्दिष्ट मंतव्य तुझको मेरे शारीर में चिरकाल तक रखे, अतएव हे राजमान देव इस हविर्दान तथा खाने योग्य पदार्थ से मुझ को सन्तुष्ट, सजीवन कर।

सरलार्थ- हे यम अंगिरा नामक पितृगण के साथ एकत्रीत होकर घास से निर्मित यज्ञवेदि के मध्य में बैठों। क्योंकि मेधाविन शास्त्र पाठ को के मन्त्र तुम्हारा आह्वान करते है, अतः हे राजन् हवि के द्वारा प्रसन्न हो।

व्याकरण-

- प्रस्तरम्- प्रपूर्वक स्तृ-धातु से अप्प्रत्यय करने पर यह रूप बनता है।
- सीद- सद्-धातु से लोट् मध्यम पुरुष एकवचन में यह रूप बनता है।
- पितृभिः- यहाँ साथ अर्थ में तृतीया है।

- संविदानः- सम्पूर्वक विद्-धातु से शानच् प्रत्यय करने पर प्रथमा एकवचन में यह रूप बनता है।
- मादयस्व- मद्-धातु से स्वार्थ में णिच् लोट् लकार के मध्यम पुरुष एकवचन में यह रूप बनता है।

अङ्गिरोभिरा गहि यज्ञियेभिर्यम वैरूपैरिह मादयस्व।
विवस्वन्तं हुवे यः पिता तेऽस्मिन्यज्ञे बर्हिष्या निषद्य॥5॥

पदपाठ- **अङ्गिरःऽभिः। आ। गहि। यज्ञियेभिः। यम। वैरूपैः। इह। मादयस्व। विवस्वन्तम्। हुवे। यः। पिता। ते। अस्मिन्। यज्ञे। बर्हिषि। आ। निऽसद्य॥5॥**

अन्वय- यम! वैरूपैः यज्ञियेभिः अङ्गिरोभिः गोत्रज यज्ञवित् इह आगाहि, मादयस्व। यः ते पिता विवस्वन्तं हुवे अस्मिन् यज्ञे वर्हिषि आ निषद्य।

व्याख्या- हे यम, विभिन्न रूपों में, विविध रूपों से युक्त साम प्रिय यज्ञ के द्वारा, यज्ञ के योग्य अङ्गिरा के साथ आओ। और आकर के इस यज्ञ के पावन पर्व पर प्रसन्न कीजिए।

सरलार्थ- हे यम विरूपर्ष के पुत्र यज्ञ के ज्ञाता अंगिरागण के साथ इस यज्ञस्थान में आकर के प्रसन्न करिये। जो विवस्वान् तेरा पिता है, उसका हम आह्वान करते है, वह यहाँ आकर के इस यज्ञ में कुश के उपर स्थान को प्राप्त करे।

व्याकरण-

- वैरूपैः- साथ अर्थ में तृतीया है।
- विवस्वन्तम्- विवस्वत् शब्द का द्वितीया एकवचन में यह रूप बनता है।
- हुवे- ह्वे-धातु से आत्मनेपदमें लट् लकार उत्तम पुरुष एकवचन में यह रूप है।
- निषद्य- नि पूर्वक सद्-धातु से ल्यप् करने पर यह रूप बनता है।

अङ्गिरसो नः पितरो नवग्वा अथर्वाणो भृगवः सोम्यासः।
तेषां वयं सुमतौ यज्ञियानामपि भद्रे सौमनसे स्याम॥6॥

पदपाठ- **अङ्गिरसः। नः। पितरः। नवऽग्वाः। अथर्वाणः। भृगवः। सोम्यासः। तेषाम्। वयम्। सुऽमतौ। यज्ञियानाम्। अपि। भद्रे। सौमनसे। स्याम॥6॥**

अन्वय- अङ्गिरसः अथर्वाणः भृगवः नवग्वाः नः पितरः सोम्यास्यः। तेषाम् यज्ञियानाम् सुमतौ अपि सौमनसे भद्रे वयं स्याम।

व्याख्या- अङ्गिरसः अङ्गिरनामका, अथर्वाणः अथर्वनामका, और भृगवः भृगुनामकाहमारे पितरदिवाकर किरणों से युक्त होते है, अथवा नयी किरणों के समान सुंदर लगते है। और वे सोम का सम्पादन करते है। सोम को चाहने वाले सोम्या कहलाते हैं। उन यज्ञिय योग्य सूर्य

टिप्पणी

किरणों के विचारणीय विज्ञान व्यवहार में हम कल्याण मन से सुख युक्त होकर रहे। और भी सूर्य की किरणें भद्र और कल्याणकारी फल दे।

सरलार्थ- अङ्गरस, अथर्वाण, भृगव आदि प्रत्येक ऋतु को अपने अनुकूल और सुखमय बनाने के लिए पुष्कल ऋतु याग करना चाहिए। हम जैसे यज्ञ के समय प्रसन्नचित्त और कल्याणकारी बने रहे वैसा आप प्रयत्न कीजिए।

व्याकरण-

- नवग्वाः- नवभिः गूः गमनं येषां ते नवग्वाः।
- भृगवः- भृगु शब्द का प्रथमा बहुवचन में यह रूप है।
- सुमतौ- सु सुंदर बुद्धि है जिसकी उसको।
- सौमनसे- सुमनसः भाव यहाँ पर तस्येदम् इससे अण् प्रत्यय करने पर सप्तमी एकवचन में यह रूप बनता है।

प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्व्येभिर्यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुः।
उभा राजाना स्वधया मदन्ता यमं पश्यासि वरुणं च देवम्॥7॥

पदपाठ- **प्र। इहि। प्र। इहि। पथिऽभिः। पूर्व्येभिः। यत्र। नः। पूर्वे। पितरः। पराऽईयुः। उभा। राजाना। स्वधया। मदन्ता। यमम्। पश्यासि। वरुणम्। च। देवम्॥7॥**

अन्वय- यत्र नः पूर्वे पितरः परेयुः पूर्व्येभिः पिथिभिः प्रेहि प्रेहि। स्वधया मदन्तौ उभा राजाना यमम् च देवम् वरुणम् पश्यसि।त्रिकद्रुकेभिः पतति षळुर्वीरेकमिद्बृहत्। त्रिष्टुब्गायत्री छंदांसि सर्वा ता यम आहिता॥16॥

व्याख्या- सत्रमधये दीक्षितस्य मरणे प्रेहीत्याद्याः पञ्चर्चैस्तृतीयावर्जता होत्रा शंसनीयाः। सूत्रतञ्च प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्व्येभिरिति पञ्चानां तृतीयामुद्धरेत् (आ0श्रौ0 6.10.19) इति।

जहाँ पर अथवा जिस स्थान पर हमारे बड़े लोगो के बनाए मर्यादित किये हुए जीवन यात्रा सम्बन्धी इच्छा पूर्ति मार्ग से हे जीव तू बार बार नित्य प्राप्त कर। अनादि काल से ही प्रवृति है यह अर्थ है। पथि के साथ जिन मार्गो में वर्त्तमान हुए हमारे पालक जन जीवनान्त आयु की पूर्णता को प्राप्त करे। और जाकर के स्वधा से अमृत से अन्न से प्रसन्न राजा के समान दोनों यम देव के प्रकाश को और वरुण को हमारे देखते हुए देखें।

सरलार्थ- (हे मृत) जहाँ हमारे पूर्वज पितर गए है, (तुम भी) पूर्व मार्ग का अनुसरण करते हुए शीघ्र जाओ, शीघ्र जाओ। (वहाँ जाकर के तुम) स्वधा द्वारा आनन्दित यम और देव वरुण दोनों का प्रत्यक्ष दर्शन करोगे।

व्याकरण-

- प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्व्येभिः- मन्त्र के प्रथम पाद में पकार का अनुप्रास लक्षण है।

- पूर्व्येभिः- पूर्वैः कृतम् यहाँ पर पूर्व शब्द से य प्रत्यय करने पर अकार का लोप करने पर भिस् को ऐस् आदेश होने पर एत्व के अभाव में यह रूप है।
- उभा राजाना मदन्ता- उभौ राजानौ मदन्तौ, यहाँ पर सुपां सुलुक् इत्यादि से आकारा आदेश।
- पश्यासि- दृश्-धातु से आशी-अर्थ में लेट् लकार मध्यम पुरुष एकवचन का यह रूप है।

सं गच्छस्व पितृभिः सं यमेनेष्टापूर्तेन परमे व्योमन्।
हित्वायावद्यं पुनरस्तमेहि सं गच्छस्व तन्वा सुवर्चाः॥8॥

पदपाठ- **सम्। गच्छस्व। पितृऽभिः। सम्। यमेन। इष्टापूर्तेन। परमे। विऽओमन्। हित्वाय। अवद्यम्। पुनः। अस्तम्। आ। इहि। सम्। गच्छस्व। तन्वा। सुवर्चाः॥8॥**

अन्वय- परमे व्योमन् पितृभिः संगच्छस्व, इष्टपुर्तेन सम् अवद्यम् हित्वाय अस्तम् पुनः एहि। सुवर्चाः तन्वा संगच्छस्व।

व्याख्या- हे हृदयाकाश में वर्त्तमान जीव, तू प्राण के साथ संगत हो जा और वही जीवन काल के साथ भी संगत हो जा। इष्टापूर्ति यज्ञादि रूप संचित किये धर्म धन के साथ संगती कर जो तेरा सच्चा मित्र है। मरण धर्मी शरीर को छोड़कर पुनर्जन्म को प्राप्त हो और उस पुनर्जन्म में सुंदर शरीर के साथ युक्त हो जा।

सरलार्थ- (हे पित, आप) श्रेष्ठ स्वर्ग में वेद कर्मफल से कुछ सुंदर कर्मफल की प्राप्ति से देव लोगो की प्राप्ति होती है। पाप को छोड़कर, पुनः अपने घर के प्रति जाओ। सुन्दर प्रकाशमान शरीर की प्राप्ति होती है।

व्याकरण-

- संगच्छस्व- सम् पूर्वक गम्-धातु से आत्मनेपद में यह रूप बनता है।
- इष्टापूर्तेन- यहाँ इष्ट शब्द का अर्थ श्रौतयाग यज्ञ आदि है, पूर्त शब्द का अर्थ सुन्दर लोगों के हितकारी और पुण्यकर्म है। इच्छा पूर्ति को इष्टापूर्त कहते है, अन्येषामपि दृश्यते इस सूत्र से दीर्घ होता है।
- हित्वाय- हा-धातु से क्त्वा अच् प्रत्यय करने पर क्त्वो यक् यहाँ पर क्त्वा यहाँ पर यक के आगम होने पर कित्त्व अदन्त अवयव में यह रूप है।
- अस्तम्-अस्-धातु से नपुंसके भावे क्तप्रत्यय करने पर यह रूप बनता है।
- सुवर्चाः- सु शोभनं वर्चः तेजः यस्य सः सुवर्चाः। सुवर्चस्-शब्द का प्रथमा एकवचन में यह रूप बनता है।

पाठगत प्रश्न

1. यम सूक्त के ऋषि कौन है। छन्द क्या है? और देवता कौन है?

2. प्रवत: इस रूप की उत्पति कैसे हुई?

3. वैवस्वतम् यहाँ पर विग्रह क्या है और प्रत्यय क्या होता है?

4. परेयिवांसम् यहाँ पर व्युत्पत्ति क्या है?

5. किसका शस्त्र अथवा चक्र का नाश नही होता है?

6. चौथे मन्त्र में अपि शब्द किस अर्थ में प्रयुक्त होता है?

7. राय: इस पद का क्या अर्थ है?

8. जज्ञाना: इस पद की व्युत्पत्ति कहा है?

9. पूर्व्येभि: इस पद की व्युत्पत्ति कहा पर है?

10. वैरूपै: यहाँ पर किस अर्थ में तृतीया है?

अपेत वीत वि च सर्पतातोऽस्मा एतं पितरो लोकमक्रन्।
अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो ददात्यवसानमस्मै॥9॥

पदपाठ- **अप। इत। वि। इत। वि। च। सर्पत। अत:। अस्मै। एतम्। पितर:। लोकम्। अक्रन्।**
अह:ऽभि:। अत्ऽभि:। अक्तुऽभि:। विऽअक्तम्। यम:। ददाति। अवऽसानम्। अस्मै॥9॥

अन्वय- अपेत वीत च अत: विसर्पत। पितर: अस्मै एतं लोकम् अक्रुन्। यम: अहोभि: अद्भि: अभुक्ति: अवासनम् व्यद्रम् अस्मै ददाति।

व्याख्या- पैतृमेधिके कर्मणि श्मशानायतनं प्रोक्षति अपेत वीत इति। सूत्रिताञ्च कर्तोदकेन शमीशाखया त्रि: प्रसव्यमायतनं परिव्रजन् प्रोक्षत्यपेत वीत वि च सर्पतात इति (आ0 गृ 4.2.8) इति।

शरीरपात हो जाने के पश्चात जीव सूर्य की पृथिवी सम्बन्धी रश्मियों को प्राप्त होता है पुन अन्तरिक्ष सम्बन्धि किरणों को और पश्चात द्युस्थान सम्बन्धी रश्मियों तक पहुचता है, एवं स्थूल शरीर के बिना ही कुछ दिन, उषा और रात्रियों तक विराम में रहकर पुनर्जन्म में आता है।

सरलार्थ- (इस स्थान से अशुभशक्तिसमूह) दूर हो हटे, सम्पूर्ण रूप से प्रस्थान करिये। पितर इस (मृतयजमान के) करने के लिए इस स्थान को स्थापित किया गया है। यम दिवस के द्वारा, रात्री के द्वारा, जल से इनको विश्राम भूमि शोभा को प्राप्ति होती है (मृत्यु के) लिए दी गई है।

व्याकरण-

- अस्मै- तादर्थ्ये निमित्त अर्थ में विकल्प से चतुर्थी होती है।
- अक्रन्- कृ-धातु से लुङ् लकार प्रथम पुरुष बहुवचन में यह रूप है।

- अहोभिः- अह्न् शब्द का तृतीया बहुवचन में यह रूप है।
- अद्भिः- अप् शब्द का तृतीय बहुवचन में यह रूप बनता है।
- अक्तुभिः- अक्तु शब्द का तृतीया बहुवचन में यह रूप बनता है।

अति द्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ शबलौ साधुना पथा।
अथा पितन्त्सुविदत्राँ उपेहि यमेन ये सधमादं मदन्ति॥10॥

पदपाठ- **अति। द्रव। सारमेयौ। श्वानौ। चतुःऽअक्षौ। शबलौ। साधुना। पथा। अथ। पितॄन्। सुऽविदत्रान्। उप। इहि। यमेन। ये। सधऽमादम्। मदन्ति॥10॥**

अन्वय- सारमेयौ श्वाग्नौ साधुना पथा अतिद्रव्य, चातुरक्षौ शवलौ। ये यमेन सधमादम् मदन्ति अथ सुविदत्रन् पितृन् उपेहि।

व्याख्या- अनुस्तरण्या वृक्कौ पार्श्वयोराम्रलाकृती। तावुद्धत्य प्रेतस्य हस्तयोर्निदधाति अति द्रव सारमेयौ इति द्वाभ्याम्। सूत्रितञ्च- वक्कावुद्धस्य पाण्योरादध्याद् अति द्रव सारमेयौ श्वानाविति (आ0गृ0 4.3.19) इति।

हे जीव, तू उचित मार्ग से चार प्रहर रूप चार आखों वाले, सूर्य तथा चन्द्र प्रकाश से चित्र रंग युक्त उषा पुत्रों दिन और रातओं समीचीन रूप से प्राप्त हो इसके पश्चात कल्याण सम्पादक ऋतु सहचरित सूर्य की रश्मियों को प्राप्त कर जो समय के साथ सदा सहयोग रखती है।

सरलार्थ- (हे अग्ने) देहान्त के पश्चात जीव शीघ्र-शीघ्र दिन रातो को सूर्य रश्मियो द्वारा पुनर्जन्मार्थ प्राप्त होता है।

व्याकरण-

- द्रव- द्रु-धातु से मध्यम पुरुष एकवचन में यह रूप बनता है।
- सारमेयौ- सरमायाः पुत्रौ इस अर्थ में सरमा शब्द को स्त्रीभ्यो ढक् इससे ढक् प्रत्यय करने पर तथा आदि वृद्धि, ढकार को एय आदेश होने पर द्वितीया द्विवचन में यह रूप बनता है।
- चतुरक्षौ-चत्वारि अक्षीणि ययोः तौ यहाँ पर बहुव्रीहि समास है।
- सधमादम्- सह पूर्वक मद्-धातु से णमुल् प्रत्यय करने पर यह रूप बनता है।

यौ ते श्वानौ यम रक्षितारौ चतुरक्षौ पथिरक्षी नृचक्षसौ।
ताभ्यामेनं परि देहि राजन्स्वस्ति चास्मा अनमीवं च धेहि॥11॥

पदपाठ- **यौ। ते। श्वानौ। यम। रक्षितारौ। चतुःऽअक्षौ। पथिऽरक्षी इति पथिरक्षी। नृऽचक्षसौ। ताभ्याम्। एनम्। परि। देहि। राजन्। स्वस्ति। च। अस्मै। अनमीवम्। च। धेहि॥11॥**

अन्वय- राजन् यम ते यौ श्वानौ ताभ्याम् एनम् परदेहि। रक्षितारौ चतुराक्षौ पथिरक्षी नृचक्षसौ। अस्मै च अनमीवम् धेहि।

टिप्पणी

व्याख्या- हे राजन्, हे यम, तेरे जो रक्षक चारप्रहर रूप चार आखों वाले मार्गपाल प्राणियों के सदा दर्शक श्वान तुल्य प्रत्येक जीव के पीछे-पीछे चलने वाले दिन और रात है उन दिन रातों के साथ इस जीव को पुनर्जन्म के लिए छोड़, हे राजन ! इस जीव के लिए सत्तारूप स्वस्ति और नीरोगता का सम्पादन कर।

सरलार्थ- हे राजन् जो जीव का जीवन समय समाप्त हो जाने पर फिर से नया जीवन मिलता है जो की शुद्ध और स्वस्थ होकर दिनरात के साथ पुनर्वहन करता है। इसका मङ्गल हो, इनको रोग रहित करो।

व्याकरण-

- पथिरक्षी- मार्ग की रक्षा करता है वह पथिन् है, वहा पर रक्ष-धातु से इन् प्रत्यय करने पर प्रथमा द्विवचन में यह रूप बनता है।
- नृचक्षसौ- नृन् चक्षाते यहाँ पर नृ पूर्वक चक्ष्-धातु से असुन् प्रत्यय करने पर यह रूप बनता है।
- स्वस्ति- यहाँ पर अव्यय रूप से प्रयोग किया गया है।
- राजन्- राजन् शब्द का सम्बोधन प्रथमा एकवचन में यह रूप बनता है।
- धेहि- धा शब्द का लोट् मध्यम पुरुष एकवचन में यह रूप बनता है।

उरूणसावसुतृपा उदुम्बलौ यमस्य दूतौ चरतो जनाँ अनु।
तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दातामसुमद्येह भद्रम्॥12॥

पदपाठ- **उरुऽणसौ। असुऽतृपौ। उदुम्बलौ। यमस्य। दूतौ। चरतः। जनान्। अनु। तौ। अस्मभ्यम्। दृशये। सूर्याय। पुनः। दाताम्। असुम्। अद्य। इह। भद्रम॥12॥**

अन्वय- यमस्य दूतौ जनान् अनुतरतः उरुनसौ असुतृप्तौ उदुम्वलौ। तौ सूर्याय दृशये अद्य इह अस्मभ्यम् पुनः भद्रम् असुम् दाताम्।

व्याख्या- वे दिन और रात काल के दूत बने हुए बड़े कुटिल कठोर स्वभाव के, प्राणों से तृप्त होने वाले महाबली उत्पन्न हुए सभी जीवों में साथ साथ चलते हैं। वे दिन और रात बारम्बार सूर्य दर्शन के लिए आज इस लोक में हमारे लिए सुखदायक जीवन धारण करने को दूसरा जन्म फिर देवे।

सरलार्थ- यम के दो दूत है, दिन और रात आयु रूप जीवन काल के दूत बन कर बारम्बार सूर्यदर्शन कराते हुए जीव को अंतिम काल तक ले जाते है एवं पुनर्जन्म भी धारण कराते है। वे हमारे लिए कल्याणकारी प्राण देते है, जिससे हम पुनः सूर्य को देख सकते है।

व्याकरण-

- उरुणसौ- उरु नासिके ययोः तौ उरुणसौ।

- असुतृपौ- असुभिः तृप्यन्तौ यहाँ पर असु पूर्वक तृप्-धातु से क प्रत्यय करने पर यह रूप बनता है।
- उदुम्बलौ- उरु बलं ययोः तौ यहाँ पर बहुव्रीहि समास है।
- दाताम्- दा-धातु लुङ् लोट प्रथम पुरुष द्विवचन में यह रूप बनता है।

यमाय सोम सुनुत यमाय जुहुता हविः।
यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्निदूतो अरंङ्कृतः॥13॥

पदपाठ- **यमाय। सोमम्। सुनुत। यमाय। जुहुत। हविः।**
यमम्। ह। यज्ञः। गच्छति। अग्निऽदूतः। अरम्ऽकृतः॥13॥

अन्वय- यमाय सोमं सुनुत, यमाय हविः जुहुतः अग्निदूतः यज्ञः अरङ्कृतः यमम् ह गच्छति।

व्याख्या- हे ऋत्विज, यम के लिए यम देवता के लिए समय को अनुकूल बनाने के लिए ओषधि रस की हवि - आहुति अग्नि में होम करो अग्निदूत के द्वारा यह संपादित यज्ञ काल को प्राप्त हो जाता है। अग्निर्देवानां दूतं आसीत् (तै.सं 2/5/8/5 इति। उस प्रकार का यज्ञयम के समीप जाता है।

सरलार्थ- (हे ऋत्विजो) यम को उद्दिश्य करके आयुर्वेदिक ढंग से ओषधि रस का होम जीवन को चिरकालीन बनाने का हेतु है। अग्नि दूत है जिसका वह यज्ञ को सज्जित करके यम के समीप ही जाता है।

व्याकरण-

- यमाय- तादर्थ्य में अथवा निमित्त अर्थ में चतुर्थी होती है।
- सुनुत- सु शब्द का परस्मैपद लोट् मध्यम पुरुष बहुवचन में यह रूप बनता है।
- जुहुता- हु-धातु से लोट् मध्यम पुरुष बहुवचन में यह रूप बनता है।
- अग्निदूतः- अग्निः दूतः यस्मिन् सः यहाँ पर बहुव्रीहि समास है।
- अरंकृतः- अलंकृतः, रकार लकार का भेद है, अभिषवादि संस्कार अलंकार है।

यमाय घृतवद्धविर्जुहोत प्र च तिष्ठत।
स नो देवेष्वा यमद्दीर्घमायुः प्र जीवसे॥14॥

पदपाठ- **यमाय। घृतऽवत्। हविः। जुहोत। प्र। च। तिष्ठत। सः। नः। देवेषु। आ। यमत्।**
दीर्घम्। आयुः। प्र। जीवसे॥14॥

अन्वय- यमाय घृतवत् हविः जुहोतः प्र च तिष्ठत। देवेषु सः प्रजीवसे नः दीर्घम् आयुः आयमत्।

व्याख्या- हे ऋत्विज, पूर्वोक्त जीवनकाल और विश्व काल को अनुकूल बनाने के लिए घृत सहित ओषधि रस रूप हवि आदि का होम करो और जीवन की उच्चता को प्राप्त होओ एवं

वह काल हमारे अधिक और उत्तम जीवन के लिए हमारी इन्द्रियों में दीर्घ जीवन का विस्तार करो। देवो के मध्य यम देव हमको दीर्घ आयु प्रदान करे।

सरलार्थः- (हे ऋत्विजो) यम को उद्दिश्य करके घृत युक्त हवि को देते हुए उसके लिए उपस्थित हुआ। देवो में वह हमारे प्रकृष्ट दीर्घ जीवन के लाभ के लिए चिरस्थायी रहती है।

व्याकरण-

- घृतवत्- घृतमस्ति अस्य यहाँ पर घृतशब्द से मतुप् प्रत्यय करने पर यह रूप बनता है।
- जुहोत- हु-धातु से लोट् मध्यम पुरुष बहुवचन में यह रूप बनता है।
- आ यमत्- आ यम्-धातु लुङ् प्रथम पुरुष एकवचन में यह रूप बनता है।
- आयुः- यहाँ पर आयु सम धातु ज कर्म है।
- जीवसे- जीव्-धातु से तुमर्थ में असे जीवसे इति, जीवितुम् यहाँ पर अर्थ में है।

यमाय मधुमत्तमं राज्ञे हव्यं जुहोतन।
इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकृद्भ्यः॥15॥

पदपाठ- **यमाय। मधुमत्ऽतमम्। राज्ञे। हव्यम्। जुहोतन। इदम्। नमः। ऋषिऽभ्यः। पूर्वऽजेभ्यः। पूर्वेभ्यः। पथिकृत्ऽभ्यः॥15॥**

अन्वय- राज्ञे यमाय मधुमत्तमम् हव्यम् जुहोतन। पूर्वजेभ्यः ऋषिभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकृद्भ्यः इदं नमः।

व्याख्या- हे ऋत्विजो, यम के लिए पूर्वोक्त सर्वत्र राजमान समय को अनुकूल बनाने के लिए मधु या मिष्ट से युक्त हवि का होम करना चाहिए धर्म - मार्ग सम्पादन करने वाले पूर्वजो की अपेक्षा भी जो पूर्व ऋषि हो चुके है उनके लिए यह तीन मंत्रे में कहा हुआ सोम घृत मधु सहित हवि का होम रूप कर्म नम्रता रूप या शिष्टाचार रूप हो।

सरलार्थ-राजा यम को उद्दिश्य करके अत्यधिक मधु से मिश्रित हवि द्रव्य की आहूति देते है। पूराने ऋषियों के लिए शिष्टाचार का अनुष्ठान भी समझना चाहिए।

व्याकरण-

- यमाय- तादर्थ्य में अथवा निमित्त अर्थ में चतुर्थी विभक्ति है।
- मधुमत्तमम्- मधु अस्ति अस्मिन्निति मधुमत्, अतिशयेन मधुमत् यहाँ पर तमप् प्रत्यय करने पर द्वितीया एकवचन में यह रूप बनता है।
- जुहोतन- हु-धातु से लोट् मध्यम पुरुष बहुवचन में यह रूप बनता है।
- पूर्वजेभ्यः- पूर्वे जातः इति पूर्वजः, तेभ्यः।

त्रिकद्रुकेभिः पतति षळुर्वीरेकमिद्बृहत्।
त्रिष्टुब्गायत्री छन्दांसि सर्वा ता यम आहिता॥16॥

पदपाठ- **त्रिऽकद्रुकेभिः। पतति। षट्। उर्वीः। एकम्। इत्। बृहत्। त्रिऽस्तुप्। गायत्री। छन्दांसि। सर्वा। ता। यमे। आऽहिता॥16॥**

अन्वय- त्रिकद्रुकेषु पतति। षट् उर्वी, एकम् इत् वृहत्, ता सर्वा त्रिष्टुप् गायत्री छन्दांसि यमे आहितो।

व्याख्या- त्रिकुद्रुकेभिः। यहाँ पर द्वितीयार्थ में तृतीया है। स्वभाव तथा निज स्वतंत्रता में किसी की अपेक्षा न करने वाला एक अकेला काल भूत वर्त्तमान भविष्यत इन तीन कालचक्रो से ऋतु रूप छः भूमियो को प्राप्त होता है द्यावा पृथिवी और सारी दिशायें अर्थात अन्तरिक्ष काल के अन्दर ही रखे हुए है।

सरलार्थ- ज्योतिष्टोम आदि सोमयाग में यम के लिए हवि गिरते है। छः ऋतू, और बृहत याग गायत्री छन्द में यम को अर्पण करते है।

व्याकरण-

- उर्वीः- उर्वीशब्द का द्वितीया बहुवचन में यह रूप बनता है।

पाठगत प्रश्न

11. इस सूक्त के आठवें मन्त्र में अस्मै यहाँ पर किस अर्थ में चतुर्थी है?
12. अक्तुभिः यह रूप कैसे बनता है?
13. द्रव यह रूप कैसे बनता है?
14. यमाय यहाँ पर किस अर्थ में चतुर्थी होती है?
15. जीवसे इसका क्या अर्थ है?
16. पूर्वजेभ्यः इसका विग्रह लिखो?

2.2 यम का स्वरूप

ऋग्वेद के देवता गोष्ठी में यम का महत्वपूर्ण स्थान है। ऋग्वेद के तीन सूक्तों में उसके विषय में कथा प्राप्त होती है (10/135.154)। उनको छोड़कर भी यम का उसकी बहिन के साथ कथोपकथन युक्त एक अन्य भी सूक्त है। उस सूक्त का नाम 'यमयमीसंवादसूक्त' (10.10)। वरुण-बृहस्पति-अग्नि आदि देवो के साथ भी उसकी स्तुति अनेक मन्त्रो में प्राप्त होता है। निरुक्तकार यास्क ने उसके विषय में निरुक्त शास्त्र में यम शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए कहते

है – 'यमो गच्छतीति सत:' (10.19) इति। यहाँ यम शब्द उपरमार्थक यम् धातु से कर्ता में निष्पन्न होता है। उसका अर्थ है जो प्राणियों को उपरमण करता है अर्थात् प्राणियों के प्राण को छुडाकर ले जाता है। निरुक्त में यमशब्द से पुन: अग्निदेव कहलाता है। और भी निरुक्त में कहा गया है – 'अग्निरपि यम उच्यते' (10.12) इति। वहाँ पर यम् धातु प्रदान रूप अर्थ है। यच्छति प्रयच्छति कामान् स्तोतृभ्य: इति यम:। परलोकतत्त्व विषय में मृत्यु की अमरता विषय पर और मृत्यु से परे जीवन विषय में ज्ञान यम सूक्त से प्राप्त होता है। यम शब्द का यमज रूप अर्थ भी है। वहाँ पर यमयमी दोनों पद से दोनों के द्वारा विवस्वत्सरण्वो: संगमेन जातं यमजापत्यद्वयं का ग्रहण किया जाता है।

ऋग्वेद में यम मृत्यु इस नाम से मृत्यु के अधिष्ठाता देव रूप से स्तुति की जाती है। मृत आत्मा को वह शरीर देता है। मृत्यु के बाद सभी मनुष्य उसके समीप ही जाते है। वैसे वेद भी कहता है – 'सङ्गमनं जनानाम्' (10.14.9) इति। वह हमारा पूर्वपुरुष, मृत्यु के बाद परे जो अमृतलोक का मार्ग पहले से ही जाना जाता है – 'यमो नो गातुं प्रथमो विवेद' (10.14.2) इति। और वहाँ जाकर के वह प्रेत लोक के अधिपति के रूप में जाने जाते है। वह ही मृत्यु के परे लोगों के लिए आश्रय का निर्देश किया है। वैसे वेद में भी कहा गया – 'यमो ददात्यवसानम् अस्मै' (10.14.9) इति। मृत्यु के परे लोगो के लिए वे जो स्थान आश्रय रूप से निर्देश किया वहाँ पर पिशाच आदि अशुभशक्ति युक्त अनिष्टविधान के लिए असमर्थ होते हैं। उसका अपना निवास स्थान स्वर्ग लोक है।

वैदिक मन्त्रों में वह वैवस्वत कहलाता है। निरुक्त में और बृहद्देवता में वह विवस्वत्सरण्वो के पुत्र के रूप में इस प्रकार का उपाख्यान प्राप्त होता है। सरमा वंशीय श्वान उसके दूत हैं। और वेश्वानचार नेत्रों से युक्त है। उनकी नाक विशाल और उनका वर्ण विचित्र है। मृत लोग जिस मार्ग से जाते है उस मार्ग के वे रक्षक है। वेद में कहा – 'पथिरक्षी' (10.14.11) इति। ये श्वान जैसे मृत लोग के विनाश के लिए समर्थ नही होते हैं, उस प्रकार की वैदिक ऋषियो के द्वारा प्रार्थना की गई है। और वेद में भी कहा गया है – 'ताभ्याम् एनं परि देहि राजन् स्वस्ति चास्मै अननीतं धेहि' (10.14.12) इति। और अन्ये कौशिक कपोतादय: अपि तस्य दूता:। (10.165. 4) इति।

ऋग्वेद मन्त्रों में उसे सभी जगह राजन् इस रूप में सम्बोधन किया गया है। वह लोगो के प्रभु है। अत मन्त्रो में उसे 'विश्पति:' कहलाता है। मृत लोग स्वर्ग लोक प्राप्त वरुण के साथ यमराज को भी आनन्द उपभोगरत के रूप में देखते है। वैसे वेद में भी कहा गया – 'उभा राजाना स्वधया मदन्ता यमं पश्यसि वरुणं च देवम्' (10.14.9) इति। सोमपायी इस नाम का भी कुछ मन्त्रो में उसकी स्तुति की गई। हमारे पूर्व पुरुषों के साथ एक जगह बैठकर वह सोमपान करते है। वैसे वेद भी कहते है – 'यस्मिन् वृक्षे सुपलाशे देवै: संपिबते यम:' (10.135.1) इति।

वह सभी अच्छे कर्मो का और बुरे कर्मो के साक्षी रहता है। देवता प्राप्ति पितृदेवो के साथ उसका घनिष्ठ सम्बद्ध है। अग्निदेव के साथ भी उसकी मित्रता है। अग्नि यम का पुरोहित है। यम को इन्दो-ईरानीदेव यह भी लोक में सुने जाते हैं, क्योंकि ईरानी धर्म ग्रन्थों में आवेस्ता का उसका यम नाम अलग से प्राप्त होता है।

ऋषियो के द्वारा प्राकृतिक शक्ति यम की सृष्टि है ऐसा कल्पना नही किया गया है, अपितु

मृतको के अधिष्ठाता देव रूप से यम की कल्पना की गई है। यम सूक्त में यम ही प्रथम मरणशील कहा गया है, वह ही मृत्यु के द्वार का सबसे पहले अतिक्रान्त किया गया है। और मृतको के लिए मार्ग का अन्वेषण उन्होंने किया है। और वेद में भी कहा गया – 'परेयिवांसं प्रवतो महीरनु बहुभ्यः पन्थामनुपश्पशानम्' (10.14.1) इति।

यम यमी ये यमज भ्राता के मेल से ही मनुष्यों की उत्पत्ति की जो कथा सुनाई जाती है, वह महत्वपूर्ण नहीं है। यम सूक्त में भी उसका समर्थन नही किया गया है। भारतीय कभी भी उस प्रकार का चिन्तन नही करते है। अपितु संयम धन यम अपनी बहन को इस निन्द्य कर्मपाश से छुड़ाकर आशीर्वाद देता है। और जिससे वह कामवेग से शान्ता मुक्त होती है। और अन्त में लज्जित यमी अपने भाई यम के पैर में गिरकर क्षमा मांगती है। जिसके द्वारा रक्षित संयम धन और यमके द्वारा रक्षित भारतीय संस्कृति है।

पाठसार

इस पाठ में विद्यमान यमसूक्त के सोलह मन्त्रो के मूल विषय में सार रूप से कहा गया है। राजा यम का हवि के द्वारा अर्चना करते हुए यजमान कहता है। वह विवस्वत पुत्र कुछ मृत लोगों के मिलाप का स्थान है। यम ही हमारे जाने वाले मार्ग का ज्ञाता है। जिसका देवता संरक्षण करते है, और कुछ देवता को ये स्वाहा द्वारा और अन्यों को स्वधा द्वारा (हव्यदान से) आनन्दित होते है। वहाँ पर यम को उद्दिश्य करके कुश आसन पर बैठकर कहते हैं। उस यम को, यज्ञ पूजा के लिए, विविध रूप से युक्त अङ्गरा नामक पितृगण को यज्ञ स्थान में आने के लिए कहते है। अङ्गिरा नामक का, अथर्वा नामक का, भृगुनामक का, हमारे पितृगण के आने के लिए कहा जाता है। उनके शुभचिन्तन में हम जैसे बैठ सकते हैं वैसे ही प्रार्थना करते हैं। वहाँ पर मृत यजमान के प्रति कहते है अनादि काल से प्रवृत्त जिस मार्ग से हमारे पूर्वज जिस स्थान को गए, तुम भी उसी मार्ग से जाओ। वहाँ पर उनके पितरों से पूर्वजों के साथ मिलाप के लिए प्रार्थना की गयी है। वहाँ पर अशुभ शक्ति समूह को हटाने के लिए कहते हैं। वहाँ पर चार आँख वाले विशिष्ट कुत्ते का वर्णन प्राप्त होता है।

पाठागत प्रश्न

17. यम सूक्त का सार लिखो।
18. यम का वर्णन मन्त्र सहित करो।
19. अङ्गिरोभिरा... इस मन्त्र की व्याख्या करो।
20. परेयिवांसम्... इस मन्त्र की व्याख्या करो।
21. यौ तेश्वानौ... इस मन्त्र की व्याख्या करो।
22. त्रिकद्रुकेभिः... इस मन्त्र की व्याख्या करो।
23. यमाय सोमम्... इस मन्त्र की व्याख्या करो।

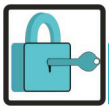

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

टिप्पणी

उत्तर भाग - 1

24. यम वैवस्वत ऋषि है। देवता - यम, आङ्गिर पित्रथर्वभृगुसोम, लिङ्गोक्त देवता अथवा पितर है। छन्द- त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्, और बृहती छन्द है।
25. प्र उपसर्ग से 'उपसर्गाच्छन्दसि धात्वर्थे' इससे स्वार्थ में वति प्रत्यय करने पर यह रूप बनता है।
26. विवस्वत: अपत्यं पुमान् इस विग्रह में अण प्रत्यय करने पर द्वितीया एकवचन में यह रूप बनता है
27. परा पूर्वक-इण्-धातु से क्वसु प्रत्यय करने पर द्वितीया एकवचन में यह रूप बनता है।
28. पूष्ण: पोषक देव का चक्र अथवा शस्त्र का नाश नही होता है।
29. न्यून अर्थ में।
30. धन।
31. जन्-धातु से कानच प्रत्यय करने पर प्रथमा बहुवचन में यह रूप बनता है।
32. पूर्वै: कृतम् यहाँ पर पूर्वशब्द से य प्रत्यय करने पर अकार लोप होने पर भिस् को ऐस आदेश होने पर यह एत्व का रूप है।
33. साथ अर्थ में तृतीया।

उत्तर भाग - 2

34. तादर्थ्य में अथवा निमित्त अर्थ में।
35. अक्तु शब्द का तृतीया बहुवचन में यह रूप बनता है।
36. द्रु-धातु से मध्यम पुरुष एकवचन में यह रूप है।
37. तादर्थ्य में अथवा निमित्त अर्थ में।
38. जीवितुम् इस अर्थ में।
39. पूर्वजेभ्य:- पूर्वे जात: इति पूर्वज:, तेभ्य:।

ग्यारहवां पाठ समाप्त